श्री तीर्थंकर परमात्माओं की लोकोत्तर चार उपमाएँ

श्री विजय सुशील सूरि

(भुजंग प्रयात वृत्तम)

महागोपरूपं महामाहण यंच, महासार्ववाहं च निर्यामकं वै ।
जगदवन्द्य तीर्थंकरं भुक्ति भाकैः, नमामि स्मरामि स्वमर्हन्तदेवम् ।।

अनादि अनंत विश्व में अनन्त उपकारी अरिहंत तीर्थंकर परमात्मा है ।

अप्रतिम प्रभावशाली

दानांतरायादि अष्टादश दोषों से रहित, अशोकवृक्षादि आठ प्रातिहार्यों से सहित, जन्म से चार, कर्मक्षय से ग्यारह और देवों से किये गये उन्नीस इस प्रकार चौंतीस अतिशयों से सुशोभित तथा वारी के पैंतीस गुणों से समलंकृत ऐसे श्री अरिहंत-तीर्थंकर परमात्मा संसार सागर में निमग्न प्राणियों के निरुपम (अप्रतिम) आलंबन रूप हैं ।

श्री अरिहंतपद की व्याख्या

अनन्तगुणों के भण्डार ऐसे विश्ववन्द्य, विश्वविभु श्रीअरिहंत तीर्थंकर परमात्माओं की आगमशास्त्र में वर्णित चार महान लोकोत्तर उपमाएं अत्युत्तम हैं। उन चार लोकोत्तर उपमाओं के निम्नलिखित नाम हैं---

(१) महागोप (२) महामाहण
(३) महानिर्यामक, और (४) महासार्थवाह

इस संबंध में न्यायविशारद, न्यायाचार्य, महामहोपाध्याय श्री यशोविजयजी महाराज सा. ने कहा है कि–

"महागोप महामाहण कहिये,
निर्यामक सत्थवाह ।
उपमा एहवी जेहने छाजे,
ते जिन नमीये उत्साह रे
भविका ! सिद्धचक्रपद वंदो,
जेम चिरकाले नंदो रे भविका ।।सिद्धचक्र।।"

महाभयंकर भवाटवी में परिभ्रमण करने से अत्यन्त भयभीत बने हुए जीवों को मुक्ति का मार्ग दिखाने के कारण सार्थवाहादि स्वरूप होने से अद्वितीय अनन्त उपकारी ऐसे अर्हित तीर्थंक परमात्मा हैं ।

"श्री नमस्कार निर्युक्ति" नाम के ग्रन्थ में इन उपमाओं के विषय में कहा हुआ है कि

"अडवीइ देसिअतं, तहेव निज्जाभया समुद्दंमि ।
छक्काय रक्खणट्ठा, महागोवा तेपा वुच्चंति ।।१।।

भवाटवी में सार्थवाह, भवसमुद्र में निर्यामक, एवं षट्काय के रक्षक होने से महागोप कहे जाते हैं ।

महागोपादि इन चार महाउपमाओं का क्रमशः स्वरूप दर्शन इस प्रकार है:--

१. महागोप--(अर्थात् महाग्वाला)

जैसे गोपालक-ग्वाला गायों आदि पशुओं का पालन, संरक्षण करता है अर्थात् जहां सुन्दर हरियाली वनस्पति रहती है उस वन-जंगल में चराने हेतु ले जाता है, एवं पशुओं को जहां पानी पीने के लिये नदी, सरोवर, तालाब, कूप, झरना, बावड़ी आदि विद्यमान हो वहां पर पानी पिलाने हेतु ले जाता है तथा सिंह, बाघ, भेड़िया, भालू, चीता आदि वनचर हिंसक जानवरों से बचाता है अर्थात् गायों आदि पशुओं को भक्षण न कर जाय एतदर्थ चौकन्ना सदा सावधान रहता है ।

उसी प्रकार सर्वज्ञ श्री अरिहंत-तीर्थंकर भगवान भी संसार के एकेन्द्रिय जीवों से लेकर पञ्चेन्द्रिय जीवों तक समस्त जीवों के हित के लिए आरम्भ समारम्भ आदि द्वारा विविध प्रकार की हिंसा से सर्वप्राणियों को बचाते हैं ।

मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग के वशीभूत आत्माओं का कर्मरूपी शत्रुओं से संरक्षण करते हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अज्ञान और अविवेकादि द्वारा उत्पन्न विविध कर्मों के आक्रमण से भी बचाते हैं ।

सम्यक्त्वरूपी सुन्दर सरोवरादि के समीप ले जाकर सम्यक् ज्ञानरूपी जलपानी का पान करवाते हैं, सम्यक् चारित्ररूपी चारा चराते हैं, तथा संसार रूपी महाभयंकर वन-जंगल में से बाहर निकाल अनंत सुखरूप मंगलमय शाश्वत मोक्ष स्थिति की ओर भव्यात्म्य प्राणियों को ले जाते हैं ।

इन कारणों से ही श्री अरिहंत-तीर्थंकर परमात्मा जिनेन्द्रदेव षड्कायिक जीव स्वरूप गाय आदि पशुओं के सच्चे संरक्षकपालक कहे जाते हैं ।

इसलिये जैनागम शास्त्रों में "अर्हन्तो हि महागोपाः" अर्थात् अर्हन्त-अरिहंत-तीर्थंकर परमात्मा ही महागोप हैं ।

इस प्रकार की यह लोकोत्तर महागोप की उपमा यथार्थ वास्तविक प्रतीत होती है ।

समस्त विश्व में सर्वोत्कृष्ट महागोप (महागोपाल-ग्वाला) कोई यदि हो तो केवल श्री अरिहंत-तीर्थंकर परमात्मा ही हैं ।

२. महामाहण (अर्थात् बड़े माहण):–

"माहण ? मा हण ? इत्येवं यो ब्रूयात् स माहणः ।" (मत मारो, मत मारो) अर्थात् "किसी भी जीव की हिंसा मत करो" इस प्रकार जो कहता है वही महामाहण है ।

यह उपमा विश्व के समस्त जीवों को यह बतलाती है कि "कर्मों के द्वारा तुम मत मारो, मत मारो" अर्थात् कर्म शत्रुओं से नहीं मरने की प्रेरणा देने वाली यह उपमा है ।

भले ही तुमने आज तक कर्मों के पंजे में रहकर अमूल्य जीवन को बर्बाद किया है फिर भी अब ध्यान रखो कि कर्मों से मारे मत जाओ । इस अवसर्पिणी के प्रथम तीर्थंकर श्रीऋषभदेव भगवान के प्रथम पुत्र तथा प्रथम चक्रवर्ती श्री भरत महाराजा थे जो षट्खण्ड के अधिपति, श्रेष्ठ, चौदह रत्न, नव महानिधार और चौंसठ हजार श्रेष्ठ स्त्रियों के सुन्दर भर्तार, चौरासी लाख हाथी, चौरासी लाख अश्व और चौरासी लाख रथ के स्वामी तथा छन्नु करोड़ गांव के और छन्नु करोड पैदल लश्कर के मालिक थे ।

इतनी समृद्धि के मालिक होने पर भी उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि यह सब मेरी आत्मा के अधःपतन का कारण है, ऐसा समझकर अपने विवेक और बुद्धि को जाग्रत करने हेतु तथा साधर्मिक भक्ति का भी अनुपम लाभ मिले इस उद्देश्य से श्री भरत महाराजा ने साधर्मिक बन्धुओं का समुदाय रक्खा था । उन सबको भक्तिपूर्वक भोजन कराने के बाद वे सब आदर्श महाश्रावकों के साथ मिलकर चक्रवर्ती श्री भरत महाराजा को कहते थे कि "जितो भवान् ? वर्द्धते भीस्तस्मान् मा हन ? मा हन ?

कर्म रिपुओं से आप जीते गये हो ? भय बढ़ता जा रहा है इसलिये कर्म शत्रुओं के द्वारा मत मारो । मत मारो । तदुपरान्त वे आदर्श महाश्रावकों को जहां-जहां हिंसा की संभावना हो वहां वहां जाकर "मा हण, मा हण" अर्थात् "मत मारो, मत मारो" इस प्रकार कहते थे । लोकोत्तर उपकारी ऐसे श्री अरिहंत-तीर्थंकर परमात्मा विश्व के समस्त प्राणियों को निरन्तर घोषणापूर्वक इस सन्देश को सुनाते हैं कि "मा हण ? मा हण ? मारो मत मारो मत अर्थात् किसी भी प्राणी को मत मारो, नहीं मारो ।

भले ही तुम संयम (चारित्र-दीक्षा) ग्रहण न कर सको तो भी शक्य यतना-जयणा अर्थात् जीवों को बचाने की तत्परता, विवेक और बुद्धि इन दोनों के समन्वय द्वारा अनर्थ दण्ड को अर्थात् निष्प्रयोजन हिंसा को सर्वथा त्यागकर अर्थदण्ड क्षेत्र में भी संकोच करते रहो । ऐसे महापवित्र अनुपम संदेश विश्व के समस्त प्राणियों को सुनाकर "अर्हन्ती हि महामाणाः" अरिहंत परमात्मा ही महामाहण हैं । इस उपमा की सार्थकता केवल श्री अरिहंत-तीर्थंकर परमात्मा ने ही की है । क्योंकि इस संसार में श्री अरिहंत तीर्थंकर परमात्मा ने ही अपने लोकोत्तर महापुरुषोचित भावकरुणारूपी जल का वर्षण किया है ।

३. महानियमिक-अर्थात् महान सुकानी (नौकाओं, जहाजों को व्यवस्थित रूप से चलाने वाला नाविक)

महासमुद्र–सागर में मुसाफिरी करने वाले प्रवासी व्यक्ति को नौका-जहाजों की मजबूती की जितनी आवश्यकता होती है उतनी ही जरूर उन नौका-जहाजों के चलाने वाले निपुण खलासी की और सुकान्ती की भी रहती है ।

जैसे भरे समुद्र-सागर में जल तरंगों से, ज्वार-भाटा आदि से चंचल व डगमगाती नाव-जहाजों को निपुण नाविक सावधानी से कुशलतापूर्वक सामने के किनारे-दूसरी ओर पहुंचा देता है, उसी प्रकार संसार रूपी महासमुद्र-सागर में अज्ञान मिथ्यात्वादि रूप तरंगों से टकराता हुआ संसारी जीवों की जीवन नौका को महानियामिक श्री अरिहंत-तीर्थंकर परमात्मा संसार सिन्धु से पार करके मोक्ष रूपी महानगर में साधक को पहुंचा देते हैं ।

साधना के सोपानों पर चढ़ते हुए साधक के अन्तःकरण को विषय और कषाय आदि के भयंकर तूफान जब एकदम कम्पित करके मोड़ देने लगते हैं तथा साधना से साधक को विचलित करते हैं तब, परमउपकारी ऐसे महानिर्यामक श्री अरिहंत तीर्थंकर परमात्मा साधक आत्मा की जीवन नौका को श्रद्धारूपी पवन के अनुपम सहारा स्वरूप सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक्चारित्र की त्रिवेणी की प्राप्ति रूप अद्वितीय सहयोग देकर अत्यन्त सावधानी से भवसिन्धु के किनारे लगाकर अनंत शाश्वत सुख के धाम स्वरूप मुक्तिपुरी में पहुंचा देते हैं ।

इसी कारण से ही श्री अरिहंत-तीर्थंकर भगवान संसार के समस्त जीवों के महान उपकारी माने जाते हैं । इसलिये शास्त्रों में लोकोतर ऐसे श्री अरिहंत-तीर्थंकर परमात्मा को लोकोत्तर ऐसी "महानिर्यामक" उपमा दी गई है ।

"अर्हन्तो महानिर्यामकाः ।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यथार्थ रूप में यह विशेषण श्री अरिहंत-तीर्थंकर परमात्मा में ही चरितार्थ होता है ।

४. महासार्थवाह–(अर्थात् महान संरक्षक सार्थवाही)

पूर्वकाल में अर्थात् प्राचीन समय में धनादि द्रव्यों से समृद्ध व्यापारी लोक पुरुषार्थ तथा व्यापार कुशल सफलता प्राप्ति हेतु शुभ उद्देश्य से देश-विदेशों में दूर-दूर तक जाया करते थे । जिसमें धनहीन, दरिद्र, निःसहाय वणिक पुत्रों को अनेक प्रकार की सहायता देकर अपने साथ दूर-दूर के प्रदेशों में या द्वीपों में ले जाया करते थे ।

वे उन आश्रितजनों को भयंकर जंगलों में, विकट मार्गों में सुन्दर संरक्षण देकर चोर, डाकू आदि दुर्जनों से अपने आश्रितों को बचाकर यथोचित स्थानों में भेज दिया करते थे ।

धनार्जन करने हेतु देशान्तर में जाने की तीव्र इच्छावाले ऐसे आधारहीन, साधनहीन जनों को उदारचित्त चरित्रवान व्यापारी आश्रय देकर उनके मनोरथ पूर्ण करने के लिए अनेक प्रकार की संपत्ति सुविधा भी देते हैं ।

इसीलिये ऐसे श्रीमंत धनवान परोपकारी व्यापारी का नाम प्राचीनकाल में राज्य संचालक एवं राजा महाराजाओं के द्वारा सार्थवाह रखा जाता था । यह उस समय बहुत मानप्रद उपाधि मानी जाती थी । सार्थवाह पद विभूषितजनों का सन्मान समाज में अच्छी तरह से किया जाता था । अर्थात् जैसे बड़े-बड़े श्रीमंत धनवान व्यापारीजनों को मानद विरुद्ध सार्थवाह मिलता था उसी प्रकार श्री अरिहंत तीर्थंकर परमात्मा भी इन संसारी जीवों को इस जीवन यात्रा में अत्यन्त आवश्यक ऐसी सम्यक् श्रद्धादिक महामूली संपत्ति का दान देकर राग-द्वेषादिक चोर, डाकू, लुटेरों से संरक्षण-पूर्वक जन्म मरणादि रूप हिंसक पशुओं से बचाते हैं तथा संसार-रूपी महा भयंकर वन-जंगलों से योग और क्षेम करते हुए कुशलता-पूर्वक भव्य जीवों को पार उतारने वाले हैं । इतना ही नहीं किन्तु शाश्वत सुख के धाम रूप मोक्ष स्थान में पहुंचा देते हैं ।

समस्त विश्व के प्राणिमात्र के अद्वितीय संरक्षक होने से इनकी लोकोत्तर आत्मशक्ति का परिचय देने हेतु शास्त्रकारों ने अपने शास्त्र में कहा है कि–

"अर्हन्तो हि महासार्थवाहाः" अर्थात् श्री अरिहंत तीर्थंकर भगवंत ही महा सार्थवाह हैं ।

इस प्रकार की उपमा वास्तविक तथा अत्यन्त यथार्थ समुचित है ।

शास्त्रोक्त उपमा की गाथाएं

शास्त्रकारों ने अपने-अपने शास्त्र में लोकोत्तर ऐसे श्री अरिहंत तीर्थंकर भगवंत को "महागोप,महामाहण, महानिर्यामक और महासार्थवाह" इन चार लोकोत्तर उपमाओं के द्वारा वर्णन किया है ।

विद्यमान आगम ग्रन्थों में भी उपर्युक्त भावों की पूरक अनेक गाथाएं देखने में आती हैं । जिनमें से कुछ गाथाएं यहां पर दी गई हैं:–

(१) महागोप की उपमा

"जीवनिकायागावो, जंतेपालेंति महागोवा ।
मरणाइभयाहि जिणा, निव्वापावणं च पावेंति ।।

(श्री आवश्यक निर्युक्ति-गाथा ९१६)

(२) महामाहण की उपमा

"सच्चे पाणा न हंतव्वा, न अज्जावेयव्वा न परिवित्तव्वा न परियावेयव्वा न उद्दवेयव्वा ।।"

(श्री आचारांग सूत्र, अध्ययन-४ उद्देश्य-१, सूत्र १)

(३) महानिर्यामक की उपमा

"णिज्जामगरयणायां, अमूढनाणमईकप्पधारणं ।
पदामि विणय पणओ, तिविहेण तिदंडविरयाणं ।।

(श्री आवश्यकनियुक्ति-गाथा ९१४)

(४) महासार्थवाह की उपमा

"पावंतिणि बुइपुरं, जिणोवईल्डेणं चेव मग्गेणं ।
अडवइ देसिअतं, एवं णेयं जिणिदाणं ।।

(श्री आवश्यक निर्युक्ति-गाथा ९०६)

इस प्रकार शास्त्रकार महर्षियों की वर्णन की हुई ये चारों उपमा अत्युत्तम हैं । श्री उपासक दशांग आदि विद्यमान आगमग्रंथों में भी विशेष वर्णन दृष्टिगोचर होता है ।

ऐसी लोकोत्तर उपमाओं से समलंकृत श्री अरिहंत तीर्थंकर भगवन्तों का विश्व के समस्त प्राणियों के ऊपर कितना बड़ा असीम उपकार है जिसका सर्वथा संपूर्ण वर्णन करना केवलज्ञानी भगवंत से भी असंभव है ।

अनंत गुणों के भंडार तरणतारण देवाधिदेव ऐसे श्री अरिहंत तीर्थंकर परमात्मा के प्रति सच्ची कृतज्ञता तथा आदर भाव को स्पष्ट रूप में प्रकट करने हेतु इनकी अहर्निश पूजाभक्ति, श्रद्धा आदि कार्य में तल्लीन रहना हम सबों का परम कर्त्तव्य है ।

श्री अरिहंत तीर्थंकर परमात्मा का ध्यान अपनी आत्मा को उत्तम ज्ञान के अनुपम अमी छांटणे पूर्वक पवित्र करता है ।

लोकोत्तर अद्वितीय अरिहंत तीर्थंकर भगवन्तों के चरण-कमलों में सद्भावना की भव्य अंजली समर्पण करने वाला प्राणी अवश्य ही मोक्ष मार्ग का साधक बनता है । अन्त में अपने सब कर्मों का क्षय करके मोक्ष के शाश्वत सुख का भागी होता है ।

"महागोपादि चार उपमाओं से समलंकृत ऐसे श्री अरिहंत तीर्थंकर परमात्माओं को हमारा हार्दिक अहर्निश कोटिशः वंदन हो ?"

□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org